[2010] 2 उम. नि. प. 439

अंगना और एक अन्य

बनाम

राजस्थान राज्य

6 फरवरी, 2009

न्यायमूर्ति तरुण चटर्जी और न्यायमूर्ति एच. एल. दत्तू

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) – धारा 389 – अपील के लंबित रहने के दौरान दण्डादेश का निलंबन – विचारण न्यायालय के समक्ष मामले के लंबित रहने के दौरान अपीलार्थियों का जमानत पर होना – विचारण न्यायालय द्वारा एक ही अपराध से आरोपित अधिकतर अभियुक्तों की दोषमुक्ति करते हुए केवल अपीलार्थियों को दोषसिद्ध करना – जमानत पर रहने के दौरान अभियुक्त-अपीलार्थियों का दंड संहिता या अन्य किसी विधि के अधीन किसी अपराध में संलिप्त न होना – इस प्रकार मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में उच्च न्यायालय द्वारा उनके दंडादेश निलंबन संबंधी आवेदन को नामंजूर किया जाना उचित न ठहराते हुए उनकी अपील मंजूर की गई और दंडादेश निलंबित करते हुए स्वीय बंधपत्र निष्पादित किए जाने पर जमानत पर छोड़ने का निदेश दिया गया ।

प्रस्तुत मामले में यह अपील 2008 की दांडिक अपील सं. 758 में फाइल किए गए 2008 के दांडिक प्रकीर्ण आवेदन सं. 781 (एस. ओ. एस.) में राजस्थान उच्च न्यायालय, जयपुर द्वारा पारित किए गए तारीख 22 अगस्त, 2008 के आदेश के विरुद्ध फाइल की गई है । उच्च न्यायालय ने आक्षेपित आदेश द्वारा अपील को मंजूर करते हुए अपीलार्थी द्वारा जमानत के आवेदन/दंडादेश के निलंबन की ईप्सा करने हुए आवेदन को खारिज कर दिया । उच्च न्यायालय के निर्णय से व्यथित होकर यह अपील फाइल की गई है । अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – वर्तमान मामले में, सिद्धदोष द्वारा अपील के लंबित रहने के दौरान दंडादेश के निलंबन के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 389 के अधीन आवेदन फाइल किया गया है । अभियुक्त उस समय जमानत पर था

जब सेशन न्यायालय के समक्ष मामला लंबित था । अभियोजन पक्ष का यह पक्षकथन नहीं है कि अभियुक्त जो जमानत पर छोड़ा गया है वह अपील के लंबित रहने के दौरान फरार हो जाएगा । जब दोषसिद्धि के विरुद्ध कोई अपील उच्च न्यायालय में फाइल की जाती है, तब न्यायालय को दंडादेश को निलंबित करने की पूरी शक्ति और विवेकाधिकार होता है किन्तु उस विवेकाधिकार का प्रयोग प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करते हुए न्यायिक रूप से किया जाना चाहिए । दंडादेश के निलंबन पर विचार करते हुए प्रत्येक मामले का अपराध की प्रकृति और जिस रीति में घटना घटित हुई है, के आधार पर परिशीलन किया जाना चाहिए कि इसके पूर्व जो जमानत मंजूर की गई थी, क्या उसका दुरुपयोग किया गया था । वस्तुतः, इस विवेकाधिकार का प्रयोग करने के लिए ऐसी कोई भी ऐसी निश्चित रीति या फार्मूला नहीं है जिसका अनुपालन किया जा सके । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 389 के अधीन दोषसिद्ध व्यक्ति द्वारा फाइल किए गए आवेदन पर विचार करते समय प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर न्यायिक विवेकाधिकार का प्रयोग किया जाएगा । (पैरा 11)

अपीलार्थी सेशन न्यायालय के समक्ष मामले के लंबित रहने के दौरान जमानत पर थे । सेशन न्यायालय ने, विचारण के पश्चात् अपीलार्थियों के सिवाय अधिकांश अभियुक्तों को दोषमुक्त कर दिया । दूसरे पक्ष का ऐसा पक्षकथन नहीं है कि जब अभियुक्त जमानत पर थे तब वे भारतीय दंड संहिता या किसी अन्य कानून के उपबंधों के अधीन किसी भी अपराध में अन्तर्वलित थे । अभियोजन का यह भी पक्षकथन नहीं है कि जब अपीलार्थी जमानत पर थे तब वे जमानत का दुरुपयोग करते हुए न्यायालय में पेश नहीं हुए या सेशन न्यायालय में चल रही कार्यवाहियों को विलंबित करने के लिए किसी भी प्रकार से जिम्मेदार थे और अभियोजन का यह भी पक्षकथन नहीं है कि यदि अपील न्यायालय, सेशन न्यायालय द्वारा पारित किए गए आदेश की पुष्टि कर देता है तो अभियुक्त फरार हो जाएंगे और दंडादेश भोगने के लिए उपलब्ध नहीं हो सकेंगे । मामले के सभी पहलुओं पर विचार करने और विशेष रूप से अभिकथित अपराध और अधिरोपित दंडादेश तथा ऐसे अन्य अभियुक्तों की दोषमुक्ति पर विचार करते हुए जिन्हें उन्हीं अपराधों के लिए आरोपित किया गया था जिनसे अपीलार्थियों को किया गया था और जब अपीलार्थी जमानत पर थे और सेशन न्यायालय के समक्ष विचारण के दौरान उनके आचरण पर भी विचार करने पर, हमारे मत में

उच्च न्यायालय दंडादेश को निलंबित कर सकता था और अपीलार्थियों को जमानत मंजूर कर सकता था । अतः, यह न्यायालय, उच्च न्यायालय द्वारा प्रयोग किए गए विवेकाधिकार में संविधान, 1950 के अनुच्छेद 136 के अधीन हस्तक्षेप करने के लिए न्यायोचित होगा । अतः, हम दंडादेश को निलंबित करते हैं और अपीलार्थियों को अपर जिला और सेशन न्यायाधीश, डीग का समाधान होने पर दो-दो ऋणशोधक्षम (सक्षम) प्रतिभुओं के साथ (स्वीय) बंधपत्र निष्पादित किए जाने पर जमानत पर छोड़े जाने का निदेश देते हैं । (पैरा 21 और 22)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2008]	(2008) 5 एस. सी. सी. 230 : **सिद्धार्थ वशिष्ट उर्फ मनु शर्मा** बनाम **राज्य (राष्ट्रीय राजधानी राज्य क्षेत्र, दिल्ली)**;	20
[2007]	(2007) 11 एस. सी. सी. 160 : **गोमती** बनाम **ठाकुर दास और अन्य** ;	19
[2005]	(2005) 5 एस. सी. सी. 281 : **वसन्त तुकाराम पवार** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ;	19
[2004]	(2004) 7 एस. सी. सी. 638 : **किशोरी लाल** बनाम **रूपा और अन्य** ;	18
[2001]	(2001) 10 एस. सी. सी. 463 : **तखत सिंह और अन्य** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** ;	12
[2001]	(2001) 10 एस. सी. सी. 338 : **सुरेश कुमार और अन्य** बनाम **राज्य (राष्ट्रीय राजधानी राज्य क्षेत्र, दिल्ली** ;	17
[1999]	(1999) 4 एस. सी. सी. 421 : **भगवान राम शिन्दे गोसाई** बनाम **गुजरात राज्य** ;	16
[1997]	(1997) 4 एस. सी. सी. 291 : **कश्मीरा सिंह** बनाम **पंजाब राज्य** ;	13
[1978]	(1978)1 एस. सी. सी. 579 : **बाबू सिंह** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ;	14

[1931] ए. आई. आर. 1931 इलाहाबाद 356 :
सम्राट बनाम. **एच. एल. हचिन्सन** । 16

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2009 की दांडिक अपील सं. 221.

2008 की दांडिक अपील सं. 758 (एकल न्यायपीठ) में 2008 की दांडिक प्रकीर्ण जमानत आवेदन सं. 781 (एस. ओ. एस.) में राजस्थान उच्च न्यायालय, जयपुर के तारीख 22 अगस्त, 2008 के अन्तरिम आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री एच. डी. थानवी, (सुश्री) अर्चना तिवारी, ए. वी. कोटेमथ और (सुश्री) प्रतिभा जैन

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री (डा.) मनीष सिंघवी (अपर महाधिवक्ता) और मिलिंद कुमार

आदेश

न्या. चटर्जी – इजाजत दी जाती है ।

2. यह अपील 2008 की दांडिक अपील सं. 758 में फाइल किए गए 2008 के दांडिक प्रकीर्ण आवेदन सं. 781 (एस. ओ. एस.) में राजस्थान उच्च न्यायालय, जयपुर द्वारा पारित किए गए तारीख 22 अगस्त, 2008 के आदेश के विरुद्ध फाइल की गई है । उच्च न्यायालय ने आक्षेपित आदेश द्वारा अपील को मंजूर करते हुए अपीलार्थी द्वारा जमानत के आवेदन/दंडादेश के निलंबन की ईप्सा करते हुए किए गए आवेदन को खारिज कर दिया ।

3. संक्षेप में तथ्य निम्न प्रकार हैं – परिवादी (अभि. सा. 2) गोपाल ने तारीख 6 मार्च, 1993 को पुलिस थाने में लिखित रिपोर्ट प्रस्तुत की जिसमें यह कथन किया कि तारीख 6 मार्च, 1993 को परिवादी और परिवार के अन्य सदस्य घर में सो रहे थे जब अभियुक्त-अपीलार्थी और अन्य व्यक्ति जिन्हें दोषमुक्त कर दिया गया है, चोरी लूट और हत्या करने के आशय से घर के अन्दर आए । शान्ति नाम की एक महिला ने शोर सुना और वह चिल्लाने लगी । उसकी चीख सुनकर अन्य सदस्य बाहर आए और उन्होंने देखा कि अभियुक्त-अपीलार्थी और अन्य व्यक्ति कट्टे लिए हुए हैं । इसके पश्चात् अभियुक्त-अपीलार्थी और अन्य व्यक्तियों ने उन पर गोली चलाकर हमला आरंभ कर दिया और उन्होंने पथराव भी किया जिसके परिणामस्वरूप

परिवादी और अन्य व्यक्तियों को गंभीर क्षतियां पहुंची । अन्वेषण किया गया और तारीख 6 मार्च, 1997 को 14 व्यक्तियों के विरुद्ध दंड संहिता, 1860 की धारा 147, 148, 149, 323, 452 और 307 के अधीन मामला रजिस्ट्रीकृत किया गया और अपर जिला और सेशन न्यायाधीश, डीग को सुपुर्द किया गया । अभियुक्त-अपीलार्थी और अन्य व्यक्तियों ने यह कथन किया है कि इस मामले से संबंधित एक प्रतिमामले की बाबत, जिसमें समुन्दर सिंह की मृत्यु हुई थी, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट वर्तमान घटना से पूर्व उसी थाने में दर्ज कराई गई थी । उन्होंने यह भी तर्क दिया कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट परिवादी द्वारा उक्त प्रतिमामले से बचने के लिए मिथ्या दर्ज कराई गई है । पक्षकारों को सुनने के पश्चात्, विचारण न्यायालय ने अंगना और चौथी को दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 326 के अधीन आरोप के लिए दोषसिद्ध किया और उन्हें अन्य सभी आरोपों से दोषमुक्त कर दिया और अन्य सभी अभियुक्त व्यक्तियों को तारीख 24 जुलाई, 2008 के निर्णय द्वारा दोषमुक्त कर दिया । अभियुक्तों को 2000/- रुपए के जुर्माने के साथ चार वर्ष के कठोर कारावास का दंडादेश अधिनिर्णीत किया गया था ।

4. उक्त निर्णय से व्यथित होकर, दोनों अभियुक्तों ने माननीय उच्च न्यायालय के समक्ष दांडिक अपील फाइल की और अपील के लंबित रहने के दौरान दंडादेश के निष्पादन के निलंबन और अपील के लंबित रहने के दौरान अभियुक्त-अपीलार्थियों को जमानत पर छोड़े जाने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 389 के अधीन दांडिक आवेदन भी फाइल किया ।

5. अभियुक्त-अपीलार्थियों के विद्वान काउंसेल ने उच्च न्यायालय के समक्ष यह दलील दी कि अभियुक्तों ने आत्मरक्षा में परिवादी पर गोली चलाई थी और परिवादी को भी क्षतियां पहुंची थीं । इसके अतिरिक्त परिवादी को पहुंची क्षतियां गंभीर प्रकृति की नहीं हैं । यह कथन किया गया था कि अभियुक्त पक्ष की ओर से भी एक व्यक्ति अर्थात् समुन्दर की घटनास्थल पर ही परिवादी पक्ष द्वारा पहुंचाई गई क्षतियों के कारण मृत्यु हुई थी । यह खुली लड़ाई थी और प्राइवेट प्रतिरक्षा में अग्न्यायुध का प्रयोग किया गया था । यह भी दलील दी गई थी कि विचारण के दौरान, अभियुक्त-अपीलार्थी जमानत पर थे, अतः मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को दृष्टिगत करते हुए अभियुक्त-अपीलार्थियों को अधिनिर्णीत किया गया दंडादेश अपील के लंबित रहने के दौरान निलंबित किया जाना चाहिए ।

6. दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 389 के अधीन फाइल किए गए आवेदन को खारिज करते हुए, उच्च न्यायालय ने निम्न मत व्यक्त किया - "पक्षकारों की परस्पर विरोधी दलीलों को सुनने और आक्षेपित निर्णय, मामले के अभिलेख विशेषकर चिकित्सीय साक्ष्य और डाक्टरों के कथनों का सावधानीपूर्वक परिशीलन करने के पश्चात, मामले के गुणागुणों पर कोई भी राय व्यक्त किए बिना यह कथन किया गया है कि अपरिहार्य निष्कर्ष यह है कि दंडादेश के निलंबन की ईप्सा के लिए किया गया आवेदन खारिज किया जाना चाहिए और इस प्रकार जमानत/दंडादेश के निलंबन का आवेदन खारिज किया जाता है ।"

7. उच्च न्यायालय द्वारा पारित किए गए आदेश से व्यथित होकर अभियुक्त-अपीलार्थियों ने हमारे समक्ष आवेदन किया है जिसमें दंडादेश के निष्पादन के निलंबन और अपील के लंबित रहने के दौरान अपीलार्थियों को जमानत पर छोड़े जाने की ईप्सा की गई है ।

8. हमने अभियुक्त-अपीलार्थियों और प्रत्यर्थियों की ओर से विद्वान काउंसेलों को सुना है ।

9. अपीलार्थियों के विद्वान कांउंसेल ने यह दलील दी है कि उच्च न्यायालय, जयपुर ने याची के दंडादेश को निलंबित न करते और अपील के लंबित रहने के दौरान अपीलार्थियों को जमानत पर न छोड़कर मात्र चिकित्सा रिपोर्ट और डाक्टरों के कथनों का अवलंब लेकर न्यायोचित नहीं किया था । विद्वान काउंसेल द्वारा यह दलील दी गई है कि उच्च न्यायालय इस तथ्य पर विचार करने में विफल रहा कि अपीलार्थी विचारण के दौरान जमानत पर थे और वे अपने वास्तविक दंडादेश की अवधि में से पहले ही क्रमशः छह मास, 26 दिन और दो मास, 24 दिन का दंडादेश भोग चुके हैं । यह भी दलील दी गई है कि उच्च न्यायालय के समक्ष लंबित अपील इन्हीं कार्यवाहियों के निरंतर में है । यह दलील दी गई है कि परिवादी पक्ष वास्तविक हमलावर थे जिन्होंने अपीलार्थियों सहित अनेक व्यक्तियों को क्षतियां पहुंचाई थीं और उनके विरुद्ध मिथ्या और सारहीन मामला बनाया था । यह भी दलील दी गई कि उच्च न्यायालय ने चिकित्सा विधिवेत्ता जिन्होंने प्रत्यर्थी के मामले का समर्थन नहीं किया है, के परिसाक्ष्य और चिकित्सा रिपोर्टों को अनदेखा किया है । यह कहा जा सकता है कि प्रत्यर्थियों को पहुंची क्षतियां आग्न्यायुध द्वारा कारित की गई गंभीर प्रकृति की नहीं है । अतः विद्वान काउंसेल ने यह दलील दी कि उच्च न्यायालय ने

दंडादेश के निलंबन और जमानत को नामंजूर करने में गलती की थी ।

10. अपीलार्थियों के विद्वान काउंसेलों ने अपनी दलीलों के समर्थन में इस न्यायालय के विनिश्चयों का अवलंब लिया है । अपीलार्थियों के विद्वान काउंसेल द्वारा उठाए गए मुद्दों पर चर्चा करते समय उन विनिश्चयों को निर्दिष्ट किया जाएगा ।

11. वर्तमान मामले में, सिद्धदोष द्वारा अपील के लंबित रहने के दौरान दंडादेश के निलंबन के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 389 के अधीन आवेदन फाइल किया गया है । अभियुक्त उस समय जमानत पर था जब सेशन न्यायालय के समक्ष मामला लंबित था । अभियोजन पक्ष का यह पक्षकथन नहीं है कि अभियुक्त जो जमानत पर छोड़ा गया है वह अपील के लंबित रहने के दौरान फरार हो जाएगा । जब दोषसिद्धि के विरुद्ध कोई अपील उच्च न्यायालय में फाइल की जाती है, तब न्यायालय को दंडादेश को निलंबित करने की पूरी शक्ति और विवेकाधिकार होता है किन्तु उस विवेकाधिकार का प्रयोग प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करते हुए न्यायिक रूप से किया जाना चाहिए । दंडादेश के निलंबन पर विचार करते हुए प्रत्येक मामले का अपराध की प्रकृति और जिस रीति में घटना घटित हुई है, के आधार पर परिशीलन किया जाना चाहिए कि इसके पूर्व जो जमानत मंजूर की गई थी, क्या उसका दुरुपयोग किया गया था । वस्तुतः, इस विवेकाधिकार का प्रयोग करने के लिए कोई भी ऐसी निश्चित रीति या फार्मूला नहीं है जिसका अनुपालन किया जा सके । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 389 के अधीन दोषसिद्ध व्यक्ति द्वारा फाइल किए गए आवेदन पर विचार करते समय प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर न्यायिक विवेकाधिकार का प्रयोग किया जाएगा ।

12. इस न्यायालय ने **तखत सिंह और अन्य** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य**[1] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया कि "अपीलार्थी पहले से 3 वर्ष और 3 मास से अधिक से जेल में है । उच्च न्यायालय में अपील की जल्दी सुनवाई किए जाने की कोई संभावना नहीं है । उपर्युक्त परिस्थितियों में अपीलार्थियों को, विद्वान मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, सिहौर का समाधान होने पर जमानत पर छोड़ा जाए ।"

13. **कश्मीरा सिंह** बनाम **पंजाब राज्य**[2] वाले मामले में उस न्यायालय

---

[1] (2001) 10 एस. सी. सी. 463.

[2] (1997) 4 एस. सी. सी. 291.

द्वारा किए गए विनिश्चय को निर्दिष्ट किया जा सकता है, जिसमें इस न्यायालय ने निम्नलिखित मत व्यक्त किया –

> "आजकल, इस न्यायालय और अनेक उच्च न्यायालयों की यह परिपाटी हो गई है कि ऐसे व्यक्ति को जमानत पर नहीं छोड़ा जाए जिसे भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपराध के लिए आजीवन कारावास से दंडादिष्ट किया गया है । प्रश्न यह है कि क्या इस परिपाटी से विचलन करना चाहिए, यदि हां, तो किन परिस्थितियों में ?
>
> यह स्पष्ट है कि किसी भी प्रकार की ऐसी कोई भी परिपाटी जिसका बार-बार प्रयोग करके और रीति रिवाजों के अनुसार ठीक ठहराया गया है किंतु जिससे अन्याय हो, उसका अभिभावी रहना मंजूर नहीं किया जा सकता । न्यायालय की प्रत्येक परिपाटी न्यायहित में होनी चाहिए तथा यही इसका न्यायौचित्य होता है । ऐसे व्यक्ति को जमानत पर न छोड़ने की परिपाटी, जिसे आजीवन कारावास से दंडादिष्ट किया गया है उच्च न्यायालयों और इस न्यायालय द्वारा इस आधार पर अपनाई गई कि जब किसी व्यक्ति को दोषी पाया जाता है और उसे आजीवन कारावास से दंडादिष्ट किया जाता है से तब तक नहीं छोड़ा जाना चाहिए जब तक उसकी दोषसिद्धि और दंडादेश अपास्त न कर दिए जाएं किन्तु उस परिपाटी का अन्तर्निहित आधार तत्व यह था कि ऐसे व्यक्ति की अपील बहुत ही कम और युक्तियुक्त समय के भीतर निपटाई जाएगी ताकि यदि अन्ततः वह निर्दोष पाया जाता है तो वह असम्यक् रूप से लंबी अवधि के लिए जेल में न रहे । इस परिपाटी का कोई तर्क-आधार ऐसी स्थिति में नहीं होता है जहां न्यायालय पांच या छह वर्ष में भी अपील का निपटारा करने की स्थिति में न हो । वास्तव में, किसी व्यक्ति को पांच या छः वर्ष की अवधि के लिए ऐसे अपराध के संबंध में जेल में रखने से न्याय की हानि होगी जब अन्ततः यह पाया जाए कि उसके द्वारा वह अपराध कारित ही नहीं किया गया है । क्या न्यायालय कभी उसे उसके द्वारा भोगी गई कारावास की अवधि के लिए क्षतिपूर्ति कर सकता है जो अंततः अनुचित पाई जाए ? क्या न्यायालय के लिए किसी व्यक्ति से यह कहना न्यायोचित होगा कि हमने तुम्हारी अपील इसलिए स्वीकार की है क्योंकि हमारे विचार से तुम्हारा मामला

प्रथमदृष्ट्या बनता है, किन्तु दुर्भाग्यवश हमारे पास तुम्हारी अपील की सुनवाई करने के लिए कुछ वर्षों तक कोई समय नहीं है, अतः जब तक हम तुम्हारी अपील की सुनवाई नहीं कर लेते तब तक तुम्हें जेल में ही रहना होगा, भले ही तुम निर्दोष क्यों न हो ? ऐसे न्याय प्रशासन से जनता के मन में कितना विश्वास पैदा होगा ? वस्तुतः ऐसे मामले हो सकते हैं और वास्तव में, इस न्यायालय में कुछ मामलों में ऐसा हुआ है कि अपील की सुनवाई किए जाने के पूर्व ही (अभियुक्त) व्यक्ति कारावास की पूर्ण अवधि भोग चुका होता है । क्या न्यायाधीश अपील की सुनवाई करने के पश्चात् ऐसे व्यक्ति को दोषमुक्त करके ग्लानि महसूस नहीं करेगा/क्या उससे न्याय भावना का अपमान नहीं होगा ? ऐसे व्यक्ति की दोषमुक्ति करके क्या लाभ होगा जो पहले ही कारावास की अवधि या उसका एक बड़ा भाग अवधि पहले ही भोग चुका है ? अतः, यह अत्यावश्यक है कि यह न्यायालय भूतकाल में जो परिपाटी अपनाए हुए था उस पर पुनः विचार किया जाए और यदि यह न्यायालय युक्तियुक्त समयावधि के भीतर किसी अभियुक्त की अपील की सुनवाई करने की स्थिति में नहीं है, तब न्यायालय को अभियुक्त को ऐसे मामलों में जमानत पर छोड़ देना चाहिए जिनमें अभियुक्त को दोषसिद्धि और दंडादेश के विरुद्ध अपील करने के लिए विशेष इजाजत मंजूर की गई हो परन्तु यह तब जब तक कि अन्यथा करने के तर्कसम्मत आधार न हों ।"

न्यायालय ने उक्त विचार को अपनाते हुए निम्न मत व्यक्त किया :–

"यदि उच्चतम न्यायालय, युक्तियुक्त समयावधि के भीतर किसी अभियुक्त की अपील की सुनवाई करने की स्थिति में नहीं है, तब न्यायालय को अभियुक्त को ऐसे मामलों में जमानत पर छोड़ देना चाहिए जिनमें अभियुक्त की दोषसिद्धि और दंडादेश के विरुद्ध अपील करने के लिए उसे विशेष इजाजत मंजूर की गई हो परन्तु यह तब जब कि अन्यथा (आदेश) करने का तर्कसम्मत आधार न हो । तथापि, अन्य विचारणा भी उतनी ही महत्वपूर्ण और सुसंगत है । जब किसी व्यक्ति को अपील न्यायालय द्वारा दोषसिद्ध किया जाता है, उसे तब तक निर्दोष नहीं कहा जा सकता जब तक कि उच्चतर न्यायालय द्वारा उसके पक्ष में अन्तिम विनिश्चय अभिलिखित न कर दिया जाए ।"

14. **बाबू सिंह** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[1] वाले मामले में यह मत व्यक्त किया गया कि संविधान, 1950 के अनुच्छेद 21 की महत्ता और व्यापकता, स्वतंत्रता से वंचित किए जाने को चिंताजनक बनाती है और यह केवल तभी अनुज्ञेय है जब से प्राधिकृत करने वाली विधि युक्तियुक्त, निष्पक्ष, समाज की भलाई के लिए हो और राज्य की आवश्यकता का उल्लेख अनुच्छेद 19 में किया गया हो । वास्तव में, वे विचारणाएं जिन्हें मैंने कसौटी के रूप में वर्णित किया है, उस सांविधानिक प्रतिपादना के समुचित अंग है जिसका मैंने व्यक्त की है । युक्तियुक्तता बोधगम्य सुरक्षा की परिकल्पना करती है और यह स्पष्ट करती है कि जमानत नामंजूर करते हुए स्वतंत्रता से वंचित करना, दंडात्मक प्रयोजन के लिए नहीं है अपितु न्याय के दोहरे हित के लिए, अर्थात् संबंध व्यक्ति और प्रभावित समाज के हित के लिए है ।

15. **सम्राट** बनाम **एच. एल. हचिन्सन**[2] वाले मामले में निम्न मत व्यक्त किया गया :–

> "जहां तक विचारण के दौरान अभियुक्त व्यक्ति को कारावास में रखने के उद्देश्य का संबंध है, यह कथन किया गया है कि उद्देश्य दंड देना नहीं है, किसी अभियुक्त को इस उपधारणा के साथ दंडित करने के आशय से कैद में रखना कि वह दोषी है भले ही उसे बाद में दोषमुक्त क्यों न कर दिया जाए, अनुचित है । यह अत्यंत स्पष्ट है । विचाराधीन व्यक्ति को निरोध में रखने का विधिसम्मत प्रयोजन अभियुक्त को उस अपराध को पुनः करने से रोकना है जिसका उस पर आरोप गया है जहां ऐसी पुनरावृत्ति का स्पष्ट संकट है और विचारण के दौरान उसकी उपस्थिति सुनिश्चित करना है । इनमें से प्रथम प्रयोजन में स्पष्ट रूप से कुछ सीमा तक यह उपधारणा की जा सकती है कि अभियुक्त दोषी है किन्तु स्वयं विचारण ही प्रथमदृष्ट्या अभियुक्त के दोषी होने की उपधारणा पर आधारित होता है और यह अभिनिर्धारित करना असंभव है कि कुछ परिस्थितियों में, यह विचार किए जाने के लिए उचित आधार नहीं है । तथापि, मुख्य प्रयोजन स्पष्ट रूप से अभियुक्त की उपस्थिति को सुनिश्चित करना है ।"

---

[1] (1978) 1 एस. सी. सी. 579.

[2] ए. आई. आर. 1931 इलाहाबाद 356.

16. **भगवान राम शिन्दे गोसाई** बनाम **गुजरात राज्य**[1] वाले मामले में, इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि जब किसी दोषसिद्ध व्यक्ति को दंडादेश की नियत अवधि के लिए दंडादिष्ट किया जाता है और जब वह किसी भी कानूनी अधिकार के अधीन कोई अपील फाइल करते हैं, तब दंडादेश के निलंबन पर अपील न्यायालय द्वारा उदारतापूर्ण विचार किया जा सकता है जब तक कि आपवादित परिस्थितियां न हों ।

न्यायालय ने निम्न मत व्यक्त किया –

> "3. जब किसी दोषसिद्ध व्यक्ति को दंडादेश की नियत अवधि के लिए दंडादिष्ट किया जाता है और जब वह किसी भी कानूनी अधिकार के अधीन अपील फाइल करता है तब दंडादेश के निलंबन पर अपील न्यायालय द्वारा उदारतापूर्वक विचार किया जा सकता है जब तक कि आपवादिक परिस्थितियां न हों । वास्तव में, यदि दंडादेश के निलंबन के विरुद्ध कोई भी कानूनी निर्बंधन है, तब यह अलग विषय होगा । इसी प्रकार, यदि दंडादेश 'आजीवन कारावास' है तब दंडादेश के निलंबन पर विचार करना भी एक भिन्न दृष्टिकोण होगा । किन्तु यदि किसी कारण सीमित अवधि का दंडादेश निलंबित नहीं किया जा सकता तब अपील का गुणागुणों के आधार पर निपटारा किया जाना चाहिए विशेषकर ऐसी स्थिति में जब ऐसे मामलों में अपील की शीघ्र सुनवाई करने का आवेदन किया गया हो । अन्यथा समय के बीतने पर अपील करने का अत्यंत महत्वपूर्ण अधिकार व्यर्थ हो जाएगा । यदि अपील न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि व्यवहारिक कारणों के आधार पर ऐसी अपीलें शीघ्र मंजूर नहीं की जा सकतीं तब अपील न्यायालय को दंडादेश निलंबित करने के मामले में विशेष ध्यान देना होगा । इसलिए, अपील को सही, अर्थपूर्ण और प्रभावी बनाने के लिए अपील न्यायालय वस्तुतः ऐसी ही शर्तें जमानत मंजूर किए जाने के समय पर अधिरोपित कर सकता है ।"

17. **सुरेश कुमार और अन्य** बनाम **राज्य (राष्ट्रीय राजधानी राज्य क्षेत्र, दिल्ली)**[2] वाले मामले में अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 34 के साथ पठित धारा 307 के अधीन दोषसिद्ध किया गया था और प्रत्येक अपीलार्थी को तीन वर्ष की अवधि के कारावास और 2000/-

---

[1] (1999) 4 एस. सी. सी. 421.

[2] (2001) 10 एस. सी. सी. 338.

रुपए के जुर्माने का संदाय करने के लिए दंडादिष्ट किया गया था और जब उन्होंने कारावास के दंडादेश के निलंबन के लिए दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 389 के अधीन आवेदन किया तब उच्च न्यायालय ने उस आवेदन को खारिज कर दिया था । उस मामले में इस न्यायालय ने **भगवान राम शिन्दे गोसाई** वाले (उपरोक्त) मामले में की गई मताभिव्यक्तियों का अनुसरण करते हुए सिद्धदोष द्वारा फाइल की गई अपील को मंजूर करते हुए सिद्धदोष द्वारा फाइल की गई अपील का निपटारा किए जाने तक विचारण न्यायालय द्वारा पारित किए गए दोषसिद्धि के आदेश को प्रास्थगित कर दिया और सिद्धदोष को जमानत पर छोड़ने का निदेश भी दिया था ।

18. **किशोरी लाल** बनाम **रूपा और अन्य**[1] वाले मामले में, इस न्यायालय ने उन पहलुओं को इंगित किया है जिन पर हत्या आदि जैसे गंभीर मामलों में धारा 389 के अधीन फायदा प्रदान करते समय न्यायालयों द्वारा विचार किया जाना अपेक्षित है, उस मामले में व्यक्त किए गए मतों को निर्दिष्ट करना लाभप्रद होगा :–

> "4. संहिता की धारा 389 अपील के लंबित रहने के दौरान दंडादेश के निष्पादन के निलंबन और अपीलार्थी को जमानत पर छोड़े जाने के बारे में है । 'जमानत' और 'दंडादेश के निलंबन' में विभेद है । धारा 389 के आवश्यक संघटकों में से एक संघटक में अपील न्यायालय से यह अपेक्षा है कि वह दंडादेश के निष्पादन के निलंबन या अपीलाधीन आदेश के निलंबन का आदेश करने के लिए लिखित में कारण अभिलिखित करे । यदि अपीलार्थी निरुद्ध है, तब उक्त न्यायालय यह निदेश दे सकता है कि उसे जमानत पर या मुचलके पर छोड़ दिया जाए । लिखित में कारण अभिलिखित करने की अपेक्षा से स्पष्ट रूप से यह उपदर्शित होता है कि सुसंगत पहलुओं पर सावधानीपूर्वक विचार किया जाना चाहिए और दंडादेश के निलंबन और जमानत मंजूर करने का आदेश सामान्य अनुक्रम में जारी नहीं किया जाना चाहिए ।
>
> 5. अपील न्यायालय मामले का वस्तुपरक रूप से मूल्यांकन करने और इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए कारण अभिलिखित करने के लिए कर्तव्यबद्ध है कि मामले में दंडादेश के निष्पादन का निलंबन किया जाना और जमानत मंजूर की जानी आवश्यक है । वर्तमान

---

[1] (2004) 7 एस. सी. सी. 638.

मामले में, दंडादेश का निलंबन किए जाने और जमानत मंजूर किए जाने के संबंध में उच्च न्यायालय द्वारा जिस संघटक पर विचार किया गया प्रतीत होता है, वह इस अभिकथन का अभाव है कि अभियुक्त प्रत्यर्थियों ने जमानत पर रहने की पूर्वतर अवधि के दौरान स्वतंत्रता का दुरुपयोग किया था ।

6. मात्र यह तथ्य कि विचारण के दौरान, उन्हें जमानत मंजूर की गई थी और स्वतंत्रता का दुरुपयोग किए जाने का कोई भी अभिकथन नहीं किया गया है, इसका वास्तव में, अधिक महत्व नहीं है । विचारण के दौरान जमानत मंजूर किए जाने का उद्देश्य उस समय महत्वहीन हो जाता है जब विचारण पूरा होने पर अभियुक्त व्यक्ति दोषी पाए जाते हैं । मात्र यह तथ्य कि उस अवधि के दौरान अर्थात् विचारण के दौरान जब अभियुक्त व्यक्ति जमानत पर थे तब उनके द्वारा स्वतंत्रता का दुरुपयोग नहीं किया गया था, स्वयं में दंडादेश के निष्पादन का निलंबन और जमानत मंजूर किए जाने को समर्थित नहीं करता है । वास्तव में, उच्च न्यायालय द्वारा जिस पर विचार किया जाना चाहिए था, वह यह है कि क्या दंडादेश के निष्पादन को निलंबित करने और उसके पश्चात् जमानत मंजूर करने के लिए कारण विद्यमान थे या नहीं । ऐसा प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय ने सही सिद्धांत को ध्यान में नहीं रखा था ।"

19. इस न्यायालय द्वारा उपर्युक्त मत **वसन्त तुकाराम पवार** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] और **गोमती** बनाम **ठाकुर दास और अन्य**[2] वाले मामलों में दोहराया गया है ।

20. **सिद्धार्थ वशिष्ठ** उर्फ **मनु शर्मा** बनाम **राज्य (राष्ट्रीय राजधानी राज्य क्षेत्र, दिल्ली)**[3] वाले मामले में इस न्यायालय ने दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 389 के अधीन आवेदन पर विचार करने के मुद्दे से संबंधित पूर्ववर्ती सभी विनिश्चयों पर विचार करने के पश्चात् यह निष्कर्ष निकाला कि हत्या जैसे गंभीर अपराधों में साधारणतया न्यायालय द्वारा दंडादेश निलंबित नहीं किया जाएगा ।

---

[1] (2005) 5 एस. सी. सी. 281.

[2] (2007) 11 एस. सी. सी. 160.

[3] (2008) 5 एस. सी. सी. 230.

21. वर्तमान मामले में, अपीलार्थी सेशन न्यायालय के समक्ष मामले के लंबित रहने के दौरान जमानत पर थे । सेशन न्यायालय ने, विचारण के पश्चात् अपीलार्थियों के सिवाय अधिकांश अभियुक्तों को दोषमुक्त कर दिया । दूसरे पक्ष का ऐसा पक्षकथन नहीं है कि जब अभियुक्त जमानत पर थे तब वे भारतीय दंड संहिता या किसी अन्य कानून के उपबंधों के अधीन किसी भी अपराध में अन्तर्वलित थे । अभियोजन का यह भी पक्षकथन नहीं है कि जब अपीलार्थी जमानत पर थे तब वे जमानत का दुरुपयोग करते हुए न्यायालय में पेश नहीं हुए या सेशन न्यायालय में चल रही कार्यवाहियों को विलंबित करने के लिए किसी भी प्रकार से जिम्मेदार थे और अभियोजन का यह भी पक्षकथन नहीं है कि यदि अपील न्यायालय, सेशन न्यायालय द्वारा पारित किए गए आदेश की पुष्टि कर देता है तो अभियुक्त फरार हो जाएंगे और दंडादेश भोगने के लिए उपलब्ध नहीं हो सकेंगे ।

22. मामले के सभी पहलुओं पर विचार करने और विशेष रूप से अभिकथित अपराध और अधिरोपित दंडादेश तथा ऐसे अन्य अभियुक्तों की दोषमुक्ति पर विचार करते हुए जिन्हें उन्हीं अपराधों के लिए आरोपित किया गया था जिनसे अपीलार्थियों को किया गया था और जब अपीलार्थी जमानत पर थे और सेशन न्यायालय के समक्ष विचारण के दौरान उनके आचरण पर भी विचार करने पर, हमारे मत में उच्च न्यायालय दंडादेश को निलंबित कर सकता था और अपीलार्थियों को जमानत मंजूर कर सकता था । अतः, यह न्यायालय, उच्च न्यायालय द्वारा प्रयोग किए गए विवेकाधिकार में संविधान, 1950 के अनुच्छेद 136 के अधीन हस्तक्षेप करने के लिए न्यायोचित होगा । अतः, हम दंडादेश को निलंबित करते हैं और अपीलार्थियों को अपर जिला और सेशन न्यायाधीश, डीग का समाधान होने पर दो-दो ऋणशोधक्षम (सक्षम) प्रतिभुओं के साथ (स्वीय) बंधपत्र निष्पादित किए जाने पर जमानत पर छोड़े जाने का निदेश देते हैं ।

23. अपील का निपटारा किया जाता है और तद्नुसार आदेश किया जाता है ।

अपील मंजूर की गई ।

अस./अनू.